लोक साहित्य एवं रंगमंच

# बिहार का लोकनाट्य 'किरतनियां' : उदभव और विकास

नितप्रिया प्रलय

भारतीय इतिहास में मध्यकाल का समय बहुत बड़े परिवर्तन के लिए जाना जाता है। एक ऐसा समय जब समाज राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक सभी धरातल पर चिन्तनशील रहा था। मध्यकाल में मुगल आक्रमण के बाद भारत में नई सत्ता स्थापित होने के कारण यहां की कला संस्कृति भी बहुत प्रभावित हुई और यह परिवर्तन नाट्य कला में सबसे ज्यादा देखने को मिलता है। इस समय नाटक को राजाश्रय मिलना समाप्त हो गया, नाटक राजमहल से निकल कर बाहर आमजनता के बीच अपना स्थान बना रहा था। चूंकि उस समय नाटकों की भाषा संस्कृत हुआ करती थी और आमजनता में इस भाषा की जानकारी का आभाव होने के कारण सम्पूर्ण भारत के नाट्यकला में एक परिवर्तन देखने को मिलता है। यह परिवर्तन है क्षेत्रीय मिश्रित भाषाशैली का विकास। इस शैली के नाटकों में संस्कृत तथा क्षेत्रीय भाषा के प्रयोग के साथ गीत, संगीत तथा नृत्य की प्रधानता देखने को मिलती है यह परिवर्तन बिहार के किरतनियाँ नाट्य में भी देखने को मिलता है। इस नाट्य शैलीयों का जन्म बिहार के मिथिला लोक नाट्य परंपरा में हुआ।

प्रसिद्ध लेखक जगदीशचंद माथुर ने अपनी पुस्तक परंपराशील नाट्य में लोकनाट्य के बारे में लिखा है "इस शैली का विकास पूर्व-मध्ययुगीन भारतवर्ष में कतिपय सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों के कारण हुई। जिस समय संस्कृत-नाटक ह्रासोन्मुखी हो रहा था, इसी युग में संस्कृत का ज्ञान जनसाधारण में कम होने लगा और नाट्य में प्रेषणीयता बढ़ाने के लिए देशी भाषा में गीतों का समावेश किया जाने लगा"।

लोकनाट्य के बारे में डॉ. ओमप्रकाश भारती लिखते हैं संस्कृत रंगमंच के पतन के साथ ही संस्कृत भाषा का भी पतन आरंभ हो चुका था। 10वीं शताब्दी से 13वीं शताब्दी के बीच लोक व्यवहार की भाषा अपभ्रंश और प्रादेशिक बोलियां हो चुकी थीं। तत्कालीन नाट्य प्रयोक्ताओं ने नाटकीय प्रेषणीयता बढ़ाने के लिए संस्कृत नाटकों में देशी भाषा के गीतों का समावेश किया। इस परंपरा के आदि प्रणेता कुलशेखर वर्मन थे, जिन्होंने संस्कृत नाटकों को जनसाधारण में बोधगम्य बनाने के लिए चाक्यार को विदूषक की भूमिका में प्रस्तुत कर स्थानीय भाषा में गीत टिप्पणी, व्याख्या एवं समसामयिक और सामाजिक परिहास पद्धति का नाट्य प्रदर्शन में समावेश कर दिया। यही नाट्य बाद में 'कुडियात्तम' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

इस नाट्यशैली का आधार ग्रन्थ जयदेव कृत 'गीतगोविन्द' है। जिसमें नृत्य, गीत, संगीत की प्रचुरता है। 1198 ई. में जयदेव ने गीतगोविन्द की रचना कर प्रदर्शनकारी कला के क्षेत्र में नवीन पद्धति को प्रचलित किया। गीतगोविन्द परवर्ती नाट्य, नृत्य, गीत आदि कलारूपों को प्रभावित किया।

आम जनता के बीच अनेक प्रकार के नाट्य-प्रदर्शन आदिकाल से और संस्कृत-नाट्य के गौरवकाल में भी होते रहे थे, तथापि रासलीला, अंकिया नाट, जात्रा, भागवतमेल, सांग इत्यादि वर्त्तमान लोकप्रिय शैलियों का उद्भव और संस्कृत नाट्य के ह्रासकाल में एक ऐसी नृत्य-संगीत-संवाद और मिश्रित शैली से हुआ, जिसका लक्षणकारों ने तो उल्लेख नहीं किया है, लेकिन जिसके लिए नाटककरों एवं अन्य लेखकों ने 'संगीतक' शब्द का व्यवहार किया।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता हैं कि भाषा नाटक का विकास मध्यकाल में लगभग 10वीं शताब्दी तक हो चुका था। मध्यकाल का यह एक नया प्रयोग था, जो संस्कृत नाटकों में किया गया। जिसका उदेश्य था आमजनता के बीच नाटक की लोकप्रियता को बढ़ना क्योंकि नाटक ही एक ऐसा

माध्यम है जिसके द्वारा मनोरंजन के साथ-साथ आसानी से सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, आदि समस्याओं से हर वर्ग के जनता को अवगत कराया जा सकता है। चूंकि मध्यकाल तक आते-आते देश में अन्य शासकों के आक्रमण तथा नई सत्ता (मुगल राज्य) स्थापित होने के कारण संस्कृत नाटक पतन की ओर जा रहा था। किन्तु, इसी युग में देश के कुछ कोनों में हिंदू-नरेशों ने नई नाट्य-विधाओं के विकास में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। जिसके फलस्वरूप नई नाट्य-शैली 'भाषा-नाटक' का विकास हुआ। जिसका विकास यात्रा मध्यकाल से शुरू होता है।

भाषा नाट्यशैली के विकास के मुख्य प्रवर्त्तक "केरल के कुलशेखरवर्मन, मिथिला- नरेश के हरसिंहदेव, असम के शंकरदेव, ब्रज के नारायण भट्ट, बंग के रुपगोस्वामिन, आन्ध्र के सिद्धेन्द्रयोगी और तंजोर के रघुनाथ नायक माने जाते है।

इस नई नाट्य पद्धति के कई नाम प्रचलित है जैसे- भाषा-नाटक, भाषा-संगीतक, संगीतक, संगीत नाटक, लीला नाटक, परंपराशील नाट्य, आदि। समूह-गान और समूह-वाद्य-वादन के अतिरिक्त नृत्य,गीत, संवाद यह सभी तत्व मिलते हैं और जब रंगशाला में प्रेक्षकों के सामने इनका प्रदर्शन हो तो इसे भाषा नाटक कहते हैं। यह इस शैली की विशेषता है।

चुकि मेरे आलेख का विषय है, "किरतनियाँ नाट्य का उदभव और विकास" अतः यह आलेख केवल कीर्तनियां नाट्य पर केंद्रित है। किरतनियाँ मिथिलाञ्चल बिहार का पारंपरिक लोक नाट्य है। इसका स्वरूप मध्यकाल की पृष्ठभूमि में सामने आता है। किरतनियाँ नाट्य संरचना और अभिनय पद्धति के कारण से यह असम के अंकिया नाट, बिहार के बिदापत से समानता रखता है। नाट्य प्रस्तुति के प्रारम्भ में प्रस्तावना, वंदना और अंत में 'मंगल गायन' इस परंपरा का संबंध पुरातन नाट्य रासक और शास्त्रीय रंगमंच से स्थापित करता है। इस नाट्य शैली में आज भी जयदेव के गीतगोविंद की संगीत पद्धति, रस परंपरा के अवशेष देखे जा सकते हैं। ये लोकनाट्यों परंपरा अत्यंत समृद्ध रही है। सम्पूर्ण भारत के लोकनाट्यों को प्रभावित करने वाले तीन मुख्य कारण की उत्पत्ति यही हुई है। 11वीं शताब्दी में ज्योतिरीश्वर ठाकुर द्वारा रचित वर्णरत्नाकर, जयदेव का 'गीतगोविंद' तथा उमापति द्वारा रचित 'पारिजातहरण नाटक' इन तीन ग्रंथो का प्रभाव उत्तर से दक्षिण, पूर्वी भारत के लगभग सभी लोकनाट्यों पर पड़ा। ज्योतिरीश्वर ठाकुर के द्वारा रचित 'वर्णरत्नाकर' की बात करें तो यह ग्रंथ तत्कालीन समाज और कला का विश्वकोश है। यह गद्य काव्य है,जो प्राचीन मैथिली भाषा में लिखा गया है। विद्वानों ने इसे आधुनिक आर्य भाषा का प्राचीनतम ग्रंथ कहा है, बिदापत तथा नटुआ नाच जैसे नाट्य रूपों की चर्चा हमें वर्णरत्नाकर से ही मिलती है, वर्णरत्नाकर में वाद्यों कलाजीवियों, चौसंठ कलारूपों, नायक-नायिका के प्रकार का उल्लेख हुआ है। संगीतशास्त्रीय दृष्टि से वर्णरत्नाकर महत्वपूर्ण ग्रंथ है, इसमें 45-46 रगों का उल्लेख हुआ जिनका प्रयोग कीर्तनियाँ नाटकों में हुआ है।

बिहार के पारंपरिक नाट्य में डॉ. ओमप्रकाश भारती लिखते है कि मध्यकाल में जब संस्कृत रंगमंच पतोनोंमुखी हो रहा था तो साहित्यिक नाटकों की परंपरा भी टूटने लगी। ऐसी स्थिति में संस्कृत रंगमंच को जीवित रखने का पूरा श्रेय लोक रंगमंच को जाता है। इस समय रंगमंच में यह परिवर्तन पूरे देश में देखने को मिलता है। इसी समय केरल से लेकर असम तक की रंगशालाओं में विभिन्न नाट्य रूप दोबारा से जीवित हो गए। रंगमंच के इस विकास में देश के राजाओं का योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण रहा। इन्होंने न केवल नाटककार और नाट्य प्रदर्शन को आश्रय दिया बल्कि स्वयं यह नाट्यान्दोलन के विकास का नेतृत्व भी किया। "मिथिला में इस आन्दोलन के अगुवा कर्नाटवंशी शासक हरिसिंह देव थे। उनके शासन काल (14वीं शताब्दी) में जो नाट्य परंपरा स्थापित हुई, वह बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक तक निरंतर प्रवाहित होती रही। इसी नाट्य परंपरा को विद्वानों ने किरतनियाँ नाटक से संज्ञापित किया है।

किरतनियाँ नाटक की परंपरा लगभग छः सौ वर्षों तक अविच्छिन्न रूप से चलती रही। इस समय में लिखे गए नाटकों में केवल बीस नाटक उपलब्ध हैं। इन नाटकों के नाम \ कथासूत्र, नाटककार के नाम, आश्रयदाता \ शासक, रागों और तालों की तालिका

निम्नलिखित है:

| नाटक\ कथासूत्र | नाटककार | आश्रयदाता | प्रयुक्त राग | ताल |
|---|---|---|---|---|
| धुर्तासमगम समसामयिक\ | ज्योतिरीश्वर 1260-1340 ई. | हरिसिंह देव | बरली ,मालव ,ललित , शालंगी ,कानल ,नट ,कोलाव ,देशाख श्री\धनाछी | पणितालएकताली , ,यतिताल ,ताल ,यतिक त्रिताल ,प्रतिताल परिमठ ताल। |
| परिजातहरण नाटक कृष्ण कथाश्रित\ | उमापति उपाध्याय | हरिहरदेव | वसंत ,बरारी , ,मालव ,पंचम,असवारी ,विभास ,राजविजव ललित ,मल्लार ,केदार। | पंचम |
| गोरक्षविजय | विद्यापति 1360-1450 ई. | शिवसिंह ओईनवार वंश) ( | मालव ,श्री\धनछी , ,कानल ,देशमल्लार रामकली,शालग। | |
| नलचरित नाटक-महाभारत\ | गोविन्द 1430-1510ई. | लक्ष्मीनाथ सिंह (ओईनवार वंश) | अनुपलब्ध | |
| आनंद विजय नाटिका | रामदासउपाध्याय 1580-1660ई. | सुन्दर ठाकुर 1623-1668ई. | गीतों के साथ राग और ताल का उल्लेख नहीं है। | |
| रुकमिनिहर कृष्णकथा | ब्रह्मदास 1660-1650ई. | नारायण ठाकुर (खण्डव वंश) | नाटक अनुपलब्ध है। | |
| उषाहरण कृष्ण कथा | देवानंद 1650-1730ई. | | राजविजय ,गुर्जरी , ,बराडी ,नटराज धनश्री ,आसावरी। | |
| आनंदविजय नाटिका\ कृष्ण कथा | नन्दीपति 1580-1660ई. | माधव सिंह विष्णुसिंह 1623-1668ई. | अनुपलब्ध | |
| श्रीकृष्ण जन्म रहस्य शिवकथा | कविलाल 1720-1780ई. | नरेंदसिंह (खण्डव वंश) | मालव ,आसावरी , गौड़ीमालव के अलावे , देशाख राग ,देशीयराग तथा सोहर का उल्लेख है। | |
| श्रीकृष्ण जन्म रहस्य कृष्ण कथा\ | गोकुलानंद 1760-1810ई. | माधव सिंह | नाक अनुपलब्ध है। | |
| गौरी प्रणय नाटक शिवकथा | शिवदत्त 1785-1845ई. | छत्र सिंह 1776-1808ई. | गीतों के साथ रागताल - का उल्लेख नहीं है। शिवदत्तकृत पारिजात नाटक में सिर्फ रस , गीत और मान का उल्लेख है। | |
| रुक्मांगद कृष्ण कथा | कर्ण जयानंद 8वीं शताब्दी | माधव सिंह 1776-1808ई. | नाटक उपलब्ध नहीं है। | |
| गौरी स्वंयवर नाटिका शिव कथा\ | कान्हाराम दास 1800-1860ई. | | मालव ,केदार , ,गौड़ ,वसंत ,आसावरी के ,मालवअलावे मन , ,सोहाग ,परिछन कुमरम तथा ,बिलोकी लावाभुजाई जैसे देशी गायन का उल्लेख है। | तालों का उल्लेख नहीं। |
| उषाहरण नाटिका\ | रत्नपाणी 1800-1860ई. | छत्र सिंह 1776-1808ई. | गुर्जरी ,नटी राग-नट , बराड़ी तथा महेशवाणी | |
| प्रभावती हरणकृष्ण \ कथा | भानुनाथ देवज्ञ 1811-1885ई. | | प्रथम अंक में बराड़ी राग का उल्लेख हुआ। बाकी गीतों में राग-रागिनियों का उल्लेख नहीं है। | |
| अहल्याचरित्र | कविचंद्र चंदा ) (झा | लक्ष्मीश्वर सिंह | उपलब्ध नहीं है | |
| | 1831-1909 ई. | | | |
| उषाहरण नाटक | हर्षनाथ झा 1860-1920ई. | लक्ष्मीश्वर सिंह | इमन ,वसंत ,कल्याण , ,कलिंगडा ,परज ,झंझौटी ,मालव ,खमाज ,रागदेश ,मुलतानी ,केदार दादरा ,नटराग,ललित ,के अलावे लावणी सोहनी और चुमावन का भी जैसे लोकायन उल्लेख है। | |
| उषाहरणशिव और \ कृष्ण कथा | विश्वनाथ 1860-1920ई. | | नाटक उपलब्ध नहीं है। | |
| गजाननचारित्रनाटक \ शिव कथा | शिवनन्दन मिश्र 1860-1920ई. | | नाटक उपलब्ध नहीं है। | |
| गौरी स्वयंवर नाटिका | कान्हाराम दास 1800-1860ई. | | मालव ,केदार , ,वसंत ,आसावरी मालव गौड़ ,मल्लार ,के अलावे मान ,कुमरम ,भगवती गीत ,बिलौकी,लाबाभुजाई सोहाग आदि ,परिछन लोकायन का उल्लेख है। | |
| रुक्मिणी \परिणय-कृष्ण कथा | रमापति 1710-1780ई. | नरेंद्र सिंह खंडवंश | सिर्फ गीत संख्या के साथ राग विहाग 32 का उल्लेख हुआ है। | |
| कृष्ण \केलिमाला- | नंदिपति | | गीतों के साथ राग-ताल का उल्लेख नहीं है। | |

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि किरतनियां नाटक की संगीत योजना राग-रागिनीबद्ध है। ज्योतिरीश्वर कृत धूर्तसमागम से लेकर हर्षनाथकृत उषाहरण नाटकं तक के सभी नाटककरों ने लगभग सभी नाटकों में गीतों के साथ राग-रागिनी तथा तालों का उल्लेख किया है। इनमें संवाद गीतों को अभिनेता स्वयं गाते थे, प्रवेशगीत, वर्णन गीत आदि भी प्रयुक्त होते थे।

***किरतनियां नाट्य की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-***

- किरतनियां नाट्यशैली के सभी नाटकों में नृत्य और संगीत का अत्यधिक उपयोग किया गया है। संगीत नृत्य और संवाद तीनों ही इन नाट्यशैली के अनिवार्य अंग हैं और इन तीनों के सम्मिश्रण से ही सौन्दर्यबोध होता है।-
- किरतनियां नाट्यशैली की यह विशेषता है कि इसमें अभिनय रूढ़ीगत होता है। इस नाट्यशैली में भाषा को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न मुद्राओं का प्रयोग किया जाता है और

इसके संवादों पर विशेष स्वराघात किया जाता है।

- इस नाट्यशैली में एक ही प्रकार के पौराणिक कथानकों का प्रयोग हुआ है। नृसिंहावतर, श्रीकृष्ण-लीला, रामचरित, महाभारत के दृश्य- यह कथाएँ असम से केरल तक सभी प्रकार के नाट्यों में मिलती हैं।
- इस नाट्यशैली में सूत्रधार और विदूषक की भूमिका महत्त्व पूर्ण होती है| सूत्रधार केवल प्रारंभ में ही नहीं रहता बल्कि वह सम्पूर्ण नाट्य में किसी-न-किसी रूप में मौजूद रहता है। सूत्रधार नाटक की कथा को आगे बढ़ाता है और दर्शकों एवं कथानक को जोड़ने का काम करता है।
- देशी और मार्गी दोनों प्रकार के संगीत क्षेत्रीय नाटकों में प्रायः पाए जाते हैं। इस नाट्यशैलियों में जो संगीत प्रयुक्त हुआ है, वह रागानुबद्ध तथा तालानुबद्ध होता है।
- नाटकों में जिस संगीत का प्रयोग हुआ वह रस तथा भाव पर आधारित है।
- इसमें प्रयुक्त संगीत में दृश्य की प्रधानता है। जिसमें चरित्र-चित्रण, घटनावली, पात्रों का प्रवेश तथा प्रस्थान, घटना के आधार पर रस, ताल आदि समाहित हैं।
- इस नाट्यशैली का आधार ग्रन्थ जयदेव कृत 'गीतगोविन्द' है। जिसमें नृत्य, गीत, संगीत की प्रचुरता है।
- इस नाट्यशैली में क्षेत्र में पहले से प्रचलित नृत्य और संगीत का प्रयोग किया गया है।
- इस नाट्यशैली के लगभग प्रत्येक नाट्य में पूर्वरंग विशेष महत्त्व रखता है। वस्तुतः पूर्वरंग इन नाट्यों का सबसे व्यापक चिन्ह है।
- गीतों में प्रयुक्त राग हिन्दुस्तानी तथा कर्नाटकी दोनों संगीत पद्धति का प्रयोग किया गया है।

**संदर्भ- ग्रन्थ :**


1. जगदीशचंद माथुर , परम्पराशील नाट्य, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय नई दिल्ली- प्रकाशन- 2006 पृ.सं.26
2. ओमप्रकाश भारती, बिहार के पारंपरिक नाट्य, उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केंद्र, इलाहाबाद प्रकाशन- 2007 पृ.सं. 24
3. राधाबल्लभ त्रिपाठी, संक्षिप्तनाट्यशास्त्र चतुर्थ आध्याय वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2008 पृ. सं. 37
4. दशरथ ओझा, हिंदी नाटक: उदभव और विकास पृ. सं वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2008 पृ. सं. 26
5. भारती,ओमप्रकाश,'पूर्वोत्तर के पारंपरिक/लोक नाट्य',पृष्ठ 2


**संपर्क :** शोधार्थी, पीएच.डी. प्रदर्शनकारी कला (फिल्म एवं रंगमंच ) विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय,वर्धा, मोबाइल- 9890791936,8676867691.Email- nitpriyapralay@gmail.com